(3) **आपातकालीन स्थिति (युद्ध, आर्थिक मन्दी, आदि) तथा पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा** [Emergency (Wars, Depreciation, etc.) and the Peacock-Wiseman Hypothesis]—पीकॉक तथा वाइजमैन (Peacock and Wiseman) ने अपनी पुस्तक *The Growth of Public Expenditure in the United Kingdom* में युद्ध, आर्थिक मन्दी जैसी संकटकालीन अवस्था (emergency) की भूमिका पर विचार किया है जो लोक व्यय में वृद्धि करने में सहायक होती है। उनकी मान्यता यह है कि लोक व्यय में इसलिए वृद्धि होती है क्योंकि सरकार की आय में वृद्धि होती है। सामान्य समय में लोक व्यय का आकार सीमित होगा क्योंकि आम लोग अधिक कर के भुगतान के लिए तैयार नहीं होंगे। अतः कर का स्तर नीचा ही होता है, लेकिन युद्ध जैसे किसी बड़े संकट में लोगों के कर के भार को सहन करने का स्तर ऊंचा हो जाता है अर्थात् लोग अधिक कर देने को तैयार हो जाते हैं। युद्ध के समाप्त हो जाने पर कर पुराने स्तर पर वापस लौट नहीं जाते क्योंकि कुछ नये कर लगे ही रह जाते हैं। इससे सरकार की आय तथा व्यय में स्थायी वृद्धि हो जाती है। इसे लेखक द्वय ने 'विस्थापन प्रभाव' (Displacement Effect) की संज्ञा दी है। इस प्रभाव के कारण लोक व्यय में स्थिर वृद्धि (Stable growth) नहीं होती है बल्कि अनियमित रूप से छलांग (jump) लगाते हुए, जैसे मकान की सीढ़ी। इसे चित्र 4.1 में दिखाया गया है।

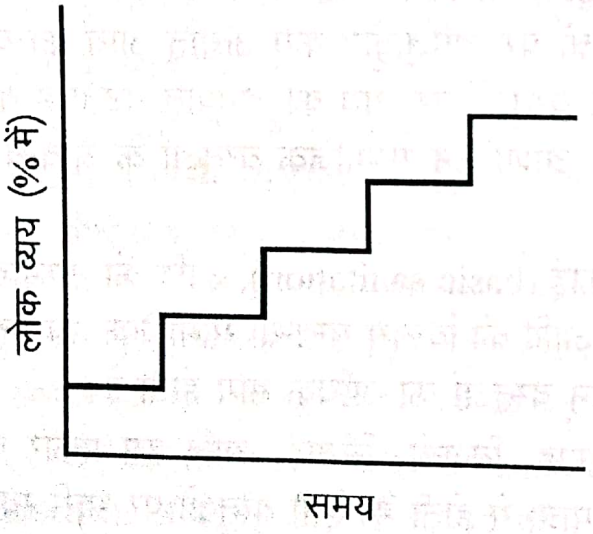

चित्र 4.1—लोक व्यय में असतत वृद्धि (Discrete increase)

विकासशील देशों में पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा के सदृश (analogous) ही 'प्लीज प्रभाव' (Please Effect) है। इन देशों में लोक व्यय, विशेषकर उपभोग-सम्बन्धी लोक व्यय, में वृद्धि इसलिए होती है क्योंकि ऐसे व्यय के लिए साधन उपलब्ध हैं। कर राजस्व में वृद्धि होने पर सार्वजनिक बचत में वृद्धि होने के स्थान पर सरकारी उपभोग व्यय में ही अधिक वृद्धि होती है।

Scanned with CamScanner

पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा का अनुमोदन मस्ग्रेव दम्पति ने भी किया है। उनके शब्दों में, "युद्ध जैसे राष्ट्रीय संकटों के समय में लोक व्यय में अस्थायी, किन्तु बाह्य वृद्धि की आवश्यकता का अनुभव किया जाता है और इसके लिए मतदाता पुराने कर-देहली को पार करने के लिए प्रस्तुत हो जाते हैं तथा कर के स्तर में ऐसी वृद्धि को स्वीकार कर लिया जाता है जिसका पहले विरोध किया जाता था।"[1] लोक व्यय में वृद्धि के कारणों की व्याख्या के सिलसिले में आपातकाल की भूमिका के महत्व को सभी स्वीकार करते हैं और आपातकालीन संकट का युद्ध सबसे अच्छा उदाहरण है। इसीलिए जे. एम. बुखानन (Buchanan) का कहना है कि लोक व्यय में वृद्धि के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण अकेला तत्व यदि कोई है तो वह युद्ध और युद्ध की आशंका है। आधुनिक युद्ध तथा प्रतिरक्षा की लागत अत्यन्त बढ़ गयी है। सरकारी बजट, विशेषकर केन्द्रीय सरकार का, का एक बड़ा भाग सेना के विभिन्न अंगों पर खर्च किया जाता है। कुछ उदाहरण लें—द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान इंग्लैण्ड प्रतिदिन 15 मिलियन पाउण्ड खर्च करता था। स्टॉकहोल्म के अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति अनुसन्धान संस्थान के अनुसार 1978 में विश्व का सेना पर कुल व्यय 400 बिलियन डॉलर था जो उस वर्ष अफ्रीका तथा दक्षिणी अमरीका की समग्र राष्ट्रीय आय से भी अधिक रकम थी। 1987 में यह बढ़कर 930 बिलियन डॉलर हो गया। पाकिस्तान की प्रधानमन्त्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने बताया कि 1985-86 में पाकिस्तान का शिक्षा पर प्रति व्यक्ति व्यय दो डॉलर था जबकि सेना पर 2,000 डॉलर। स्पष्ट ही है कि इस बड़े पैमाने पर प्रतिरक्षा व्यय से लोक व्यय का स्तर बढ़ेगा ही।

मस्ग्रेव ने अपनी पुस्तक *Fiscal System* में इस बात की विस्तार से जांच करने की कोशिश की है कि युद्धकाल में लोक व्यय के हठात काफी बढ़ जाने के पश्चात् युद्धोत्तर काल में इसकी प्रवृत्ति क्या रहेगी। इसके लिए चित्र 4.2 को देखा जाय। चित्र में यह दिखाया गया है कि युद्ध के कारण प्रतिरक्षा व्यय में हठात वृद्धि हो जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि शान्तिकालीन लोक व्यय की प्रवृत्ति A बिन्दु पर बदल जाती है और B बिन्दु से यह नई दिशा में बढ़ती है जो लोक व्यय के स्तर में वृद्धि को प्रदर्शित करती है। युद्धोत्तर काल में लोक व्यय की दिशा क्या होगी, इस सम्बन्ध में तीन सम्भावनाओं को दिखाया गया है : (1) युद्धोत्तर काल में लोक व्यय D बिन्दु पर आकर पुरानी राह DE को ग्रहण कर सकती है। ऐसी स्थिति विस्थापन प्रभाव की उपस्थिति में होगी। (2) विस्थापन प्रभाव की उपस्थिति में लोक व्यय युद्धकालीन राह पर ही युद्धोत्तर काल में भी CF के अनुसार बढ़ सकता है। (3) विस्थापन प्रभाव की स्थिति में यह भी सम्भव है कि युद्धोत्तर काल में लोक व्यय की प्रवृत्ति CGH के अनुसार बढ़ने की हो। पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा इसी सम्भावना को अधिक सही मानती है। युद्धकाल में लगाये गये नये करों में से कुछ युद्ध की समाप्ति के बाद भी रह जा सकते हैं। फलतः युद्धोत्तर काल में लोक व्यय में स्थायी वृद्धि हो जायगी, लेकिन युद्धकाल की तुलना में कम।

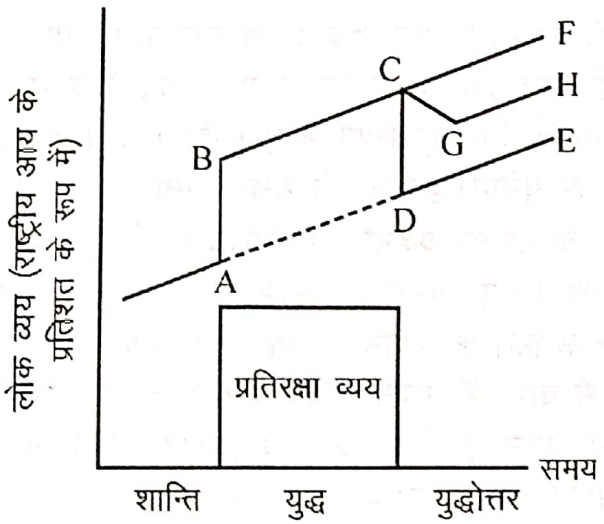

चित्र 4.2

पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा के अनुसार किसी बड़ी गड़बड़ी के नहीं होने पर लोक व्यय में वृद्धि स्थिर गति से होगी। 1960 के दशक के अन्तिम चरण में पश्चिमी देशों में लोक व्यय में विस्फोटक वृद्धि हुई। इस वृद्धि की व्याख्या किसी संकट या आपात स्थिति के रूप में नहीं हो सकती। यह कहना अधिक उचित होगा कि पीकॉक-वाइजमैन अवधारणा केवल संकेत करती है, ठोस व्याख्या प्रस्तुत नहीं करती।

अनिवर्ती चक्र प्रभाव (Ratchet Effect)

यह अवधारणा कि किसी उथल-पुथल के कारण लोक व्यय में अत्यधिक वृद्धि होती है तथा इसके पश्चात लोक व्यय अपने पुराने स्तर पर लौट नहीं आता है, की व्याख्या अनिवर्ती चक्र प्रभाव के रूप में भी की जा

Scanned with CamScanner

सकती है। उथल-पुथल के समाप्त हो जाने के वाद लोक व्यय अपने पुराने स्तर पर लौट नहीं जाता है निम्न कारणों से :

(i) करदाता लोक व्यय के उच्च स्तर से आदी हो जाता है तथा उस स्तर को ही सामान्य स्तर मानने लगता है।

(ii) उथल-पुथल की अवधि में लिये गये ऋण को वाद में भुगतान करना पड़ता है। इसके लिए वित्त का प्रबन्ध करना होता है।

(iii) उथल-पुथल की अवधि में सरकार करदाताओं से जो वादा करती है, उसे इस स्थिति के समाप्त होने पर निभाना पड़ता है।

इन तीनों को सम्मिलित रूप से अनिवर्ती प्रभाव कहा जा सकता है। इस प्रभाव के कारण लोक व्यय ऊंचे स्तर पर ठहर जाता है।

(iv) अन्त में, निरीक्षण प्रभाव (Inspection effect) उथल-पुथल की समाप्ति के पश्चात् क्रियाशील हो सकता है। इस प्रभाव के अन्तर्गत करदाता एवं सरकार अपनी स्थिति एवं प्राथमिकताओं पर पुनः विचार करते हैं। इस सिलसिले में वैसी आवश्यकताओं की खोज हो सकती है जिन पर पूर्व में ध्यान नहीं गया था। यह लोक व्यय के स्तर में वृद्धि को उचित ठहरा सकता है।

अनिवर्ती चक्र एवं निरीक्षण प्रभाव संयुक्त रूप से कार्य करते हुए ऐसा सुनिश्चित करते हैं कि लोक व्यय उच्च स्तर पर बने रहें तथा अगले उथल-पुथल के वाद फिर और ऊंचे स्तर पर आ जाते हैं।[1]

(4) **वैगनर का नियम** (Wagner's Law)—लोक वित्त के सम्बन्ध में वैगनर ने कोई आदर्श (normative) दृष्टिकोण नहीं अपनाया वल्कि उसे ऐतिहासिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि में देखा। उनके अनुसार किसी समय विशेष का चालू लोक व्यय दी हुई ऐतिहासिक परिस्थिति की आवश्यकता को पूरा करता है। ऐसे लोक व्यय में परिवर्तन आर्थिक संरचना तथा आर्थिक विकास में होने वाले बदलाव से परिलक्षित होते हैं। एक उदाहरण लें। मान लें कि जनसंख्या में वृद्धि होती है या परिवहन में क्रान्ति आती है। ऐसे परिवर्तन का प्रभाव लोक व्यय पर पड़ेगा। इन सबकी चर्चा विस्तार से की जाय।

वैगनर का कहना है कि राज्य को किस प्रकार का कार्य करना चाहिए तथा किस सीमा तक, इन सब का निर्णय इस आधार पर करना होगा कि ये क्रियाएं उन लक्ष्यों को पूरा करने के लिए हैं जिनका निर्धारण लोगों के हित को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। अतः राज्य तथा लोक वित्त प्रतिस्पर्द्धात्मक वाजार के क्षेत्र से वाहर हैं। राज्य सार्वभौम सत्ता है। वह ऐसे निर्णय लेने में स्वतन्त्र है जिनका सम्बन्ध इस वात से है कि वह किन कार्यों को करे, किस तरह करे, कितनी मात्रा में करे। इनका निर्धारण इन वस्तुओं की मांग के आधार पर नहीं होता है।

इस वात को स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि लोक व्यय का स्तर कितना होगा अर्थात् सरकार कुल कितना खर्च करे इसका निर्धारण सैद्धान्तिक धरातल पर कल्पना मात्र से नहीं हो सकता। अतः लोक व्यय के निरपेक्ष (absolute) तथा सापेक्ष (relative) स्तर का निर्धारण न तो सिर्फ लागत और न ही सिर्फ मूल्य के आधार पर किया जा सकता है वल्कि दोनों की एक साथ जरूरत है। न तो सिर्फ राजनीतिक विचार और न सिर्फ आर्थिक तर्क के आधार पर राज्य के कार्यों का निर्धारण हो सकता है। निम्न परिस्थितियों में लोक व्यय अधिक हो सकता है :

(क) यदि सार्वजनिक सेवाओं के तात्कालिक आर्थिक लाभ अधिक हों;

(ख) यदि इससे देश में उत्पादकता में वृद्धि हो; तथा

(ग) यदि गैर-कर स्रोतों से राज्य को अधिक आय प्राप्त हो।

अव इस प्रश्न पर विचार किया जाय कि क्या लोक व्यय में इतनी वृद्धि की स्वीकृति दी जा सकती है कि कर का भार लोगों पर असह्य हो जाय। असह्य भार का अर्थ है लोगों के सामान्य उपभोग में कमी तथा सामान्य वचत में ह्रास। राष्ट्रीय आपातकालीन स्थिति में इतने लोक व्यय को स्वीकार किया जा सकता है, लेकिन सामान्य परिस्थिति में नहीं। जो राज्य सामान्य स्थिति में इतना अधिक व्यय करता है वह पतन की ओर जाता है। अतः लोक व्यय की एक सीमा है जिसका स्थायी अतिक्रमण नहीं किया जा सकता।

1 "The ratchet and inspection effects work

Scanned with CamScanner

उपर्युक्त कारणों से राज्य की क्रियाओं में वृद्धि होती है और इसी आधार पर वैगनर ने कहा कि 'राज्य की क्रियाओं में वृद्धिमान विस्तार का नियम' (Law of Increasing Expansion of Public and particularly State' Activities) 'राजकोषीय आवश्यकता के, वृद्धिमान विस्तार का नियम' (Law of Increasing Expansion of Fiscal Requirements) हो जाता है। विकेन्द्रित प्रशासन तथा व्यवस्थित स्थानीय सरकार की वजह से राज्य की आवश्यकता में वृद्धि होती है। बढ़ते लोक व्यय का नियम प्रगतिशील एवं औद्योगिक देशों की वस्तु-स्थिति के निरीक्षण पर आधारित है। यह सामाजिक प्रगति का परिणाम है। वित्तीय कठिनाइयों के कारण लोक व्यय में वृद्धि रुक सकती है, किन्तु दीर्घकाल में प्रगतिशील समाज की विकास-आवश्यकता वित्तीय कठिनाइयों पर विजयी होती है।

लोक व्यय में वृद्धि के सम्बन्ध में वैगनर का विश्लेषण एक सिद्धान्त प्रस्तुत करता है, न कि इस वृद्धि का सिर्फ विवरण तथा आर्थिक औचित्य। इस सिद्धान्त के आधार में निम्न तीन पृथक् घटक हैं :

(i) ऐसा देखा गया है कि अर्थव्यवस्था के विकास के परिणामस्वरूप जटिलताओं (complexition) में वृद्धि होती है; जैसे नये-नये कानूनों को बनाना, कानूनी संरचना में लगातार विकास, आदि। कानून और व्यवस्था लागू करने के लिए लोक व्यय में लगातार वृद्धि करने की जरूरत होती है।

(ii) आर्थिक विकास के साथ शहरीकरण (Urbanisation) की प्रक्रिया जारी रहती है। इससे बाह्यताओं (externalities) में वृद्धि होती है।

(iii) सरकार द्वारा प्रदत्त वस्तुओं की मांग की आय लोच अधिक होती है। (ऊपर "आय लोच एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि" के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में मसग्रेव की व्याख्या को प्रस्तुत किया गया है।) ऊंची आय लोच के कारण आय में वृद्धि की तुलना में लोक व्यय में अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि होती है।

वैगनर के सिद्धान्त की यह मान्यता है कि लोक व्यय में वृद्धि आय में वृद्धि के कारण होती है। (It is income that explains expenditure.) 1967 में स्टानली प्लीज ने विकासशील देशों में लोक व्यय में वृद्धि के सन्दर्भ में ऐसी ही व्याख्या प्रस्तुत की। (देखें खण्ड 40.3 भी) लेकिन कीन्स की धारणा इसके विपरीत है क्योंकि, उनके अनुसार, आय का स्तर लोक व्यय के स्तर पर निर्भर करता है। अनेक प्रयोगाश्रित परीक्षणों (empirical tests) के बावजूद भी आजतक यह पूर्णरूप से तय नहीं हो सका है कि कौन किसका निर्धारक है—व्यय आय का या आय व्यय का।

जो भी हो, ऐसा मानना ही पड़ेगा कि वैगनर का नियम लोक व्यय में वृद्धि की एक अच्छी व्याख्या प्रस्तुत करता है। लेकिन इसकी कमजोरी यह है कि इसमें लोक सेवाओं की केवल मांग पक्ष पर ही ध्यान दिया गया है मांग-पूर्ति की अन्तर्क्रियाओं पर विचार नहीं किया गया है।

(5) नौकरशाही एवं लोक व्यय में वृद्धि (Bureaucracy and Increase in Public Expenditure)—

Scanned with CamScanner